Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 9.134
Volume - 9, Issue - 9, September - 2026

DOIs:10.2018/SS/202609003 --:-- Research Paper / Article / Review

'कामायनी' में प्रकृति-बोध और पारिस्थितिक चेतना : एक पर्यावरणीय पुनर्पाठ

दीपिका राणा
शोधार्थी , डॉ बी आर अम्बेडकर विश्विद्यालय, दिल्ली
deepikarana2210@gmail.com

शोध-सार: जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' हिंदी साहित्य की ऐसी महत्त्वपूर्ण कृति है जिसमें मानव-मन, प्रकृति, सभ्यता, संस्कृति, दर्शन और जीवन-मूल्यों का व्यापक एवं बहुआयामी चित्रण दिखाई देता है। सामान्यतः 'कामायनी' का अध्ययन दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा मानवतावादी दृष्टियों से किया जाता रहा है, किंतु वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में इस कृति का पारिस्थितिक पुनर्पाठ विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हो उठता है। 'कामायनी' में प्रकृति केवल काव्य-सौंदर्य की पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि वह मनुष्य और सभ्यता के अस्तित्व से गहरे रूप में जुड़ी हुई सक्रिय शक्ति है। प्रलय का चित्रण, देव-संस्कृति की विलासिता, प्रकृति के प्रति मनुष्य का असंतुलित व्यवहार, मनु का एकाकी जीवन, श्रद्धा के माध्यम से प्रकृति और जीवन के साथ पुनः जुड़ाव तथा इड़ा के माध्यम से विकसित होती सभ्यता—ये सभी प्रसंग मानव और प्रकृति के संबंध की जटिलता को सामने लाते हैं। इस दृष्टि से 'कामायनी' का प्रलय केवल पौराणिक घटना न रहकर सभ्यतागत असंतुलन के प्रतीक के रूप में भी देखा जा सकता है। प्रस्तुत शोध में 'कामायनी' के प्रकृति-बोध को आधुनिक पारिस्थितिक चेतना के संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है। अध्ययन यह स्थापित करता है कि प्रसाद का प्रकृति-दर्शन मनुष्य को प्रकृति का स्वामी मानने के स्थान पर उसके साथ सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व की ओर प्रेरित करता है। कृति में प्रकृति के जीवनदायिनी, सौंदर्यमयी, विनाशकारी और पुनर्सृजनकारी रूपों के माध्यम से यह संकेत मिलता है कि मनुष्य की वास्तविक प्रगति प्रकृति के शोषण में नहीं, बल्कि उसके साथ संतुलित संबंध में निहित है। इस प्रकार 'कामायनी' आज के जलवायु संकट, प्राकृतिक संसाधनों के अति-दोहन, प्रदूषण, जैव-विविधता के क्षरण और अनियंत्रित उपभोग के समय में एक महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय चेतावनी के रूप में पढ़ी जा सकती है।

बीज शब्द: कामायनी, जयशंकर प्रसाद, प्रकृति-बोध, पारिस्थितिक चेतना, पर्यावरण, प्रलय, सभ्यता-संकट, प्रकृति-दोहन, पुनर्सृजन, सह-अस्तित्व।

1. मूल आलेख

जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य के उन रचनाकारों में हैं जिनकी साहित्यिक दृष्टि जीवन के किसी एक पक्ष तक सीमित नहीं रहती। उनकी रचनाओं में इतिहास, संस्कृति, प्रकृति, मनुष्य, दर्शन, प्रेम, राष्ट्रबोध और मानवीय संवेदना का व्यापक संसार दिखाई देता है। 'कामायनी' इस व्यापक जीवन-दृष्टि का सर्वोच्च काव्यात्मक रूप है। वर्ष 1936 में प्रकाशित यह कृति अपने समय में जितनी महत्त्वपूर्ण थी, वर्तमान समय में भी उतनी ही प्रासंगिक दिखाई देती है। 'कामायनी' को प्रायः मानव-मन की यात्रा, मनु की मनोवैज्ञानिक विकास-यात्रा और श्रद्धा तथा इड़ा के माध्यम से बुद्धि एवं भावना के अंतर्संबंध के रूप में समझा गया है। किंतु इस काव्य की एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विशेषता उसका प्रकृति-बोध है। यहाँ प्रकृति मनुष्य के बाहर स्थित कोई निष्क्रिय सत्ता नहीं है, बल्कि मानव-जीवन और सभ्यता की नियति से गहरे रूप में जुड़ी हुई है।

आज जब पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन, जल-संकट, वनों की कटाई, वायु एवं जल-प्रदूषण, जैव-विविधता के विनाश तथा प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन जैसी समस्याओं से जूझ रही है, तब साहित्यिक कृतियों को पर्यावरणीय दृष्टि से पुनः पढ़ना आवश्यक हो जाता है। साहित्य केवल अपने समय की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों को अभिव्यक्त नहीं करता, बल्कि वह मनुष्य और प्रकृति के संबंधों पर भी विचार करता है। इसी संदर्भ में 'कामायनी' का पर्यावरणीय पुनर्पाठ हमें यह समझने का अवसर देता है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच असंतुलन किस प्रकार सभ्यता के संकट में बदल सकता है।

'कामायनी' के आरंभ में ही पाठक ऐसे संसार में प्रवेश करता है जहाँ प्रलय के पश्चात मनुष्य लगभग अकेला रह गया है। हिमगिरि पर बैठे मनु का चित्र केवल एक व्यक्ति की मानसिक स्थिति का चित्रण नहीं है, बल्कि यह उस सभ्यता के अंत का भी प्रतीक है जिसने प्रकृति की शक्तियों के सामने अपनी सीमाओं को पहचानने में असफलता दिखाई। प्रसाद प्रकृति को कभी शांत, सुंदर और जीवनदायिनी रूप में प्रस्तुत करते हैं तो कभी विराट, दुर्जेय और विनाशकारी शक्ति के रूप में। प्रकृति का यह द्वंद्वात्मक स्वरूप 'कामायनी' के पर्यावरणीय अर्थों को गहराई प्रदान करता है।

2. प्रकृति : सौंदर्य से जीवन-दर्शन तक -प्रसाद के काव्य में प्रकृति का स्थान केवल सजावटी नहीं है। प्रकृति उनके यहाँ मनुष्य की भावनाओं और मानसिक अवस्थाओं को अभिव्यक्त करने का माध्यम भी है। 'कामायनी' का आरंभ हिमगिरि, शीतलता, जल, आकाश और प्रलय के विराट दृश्य से होता है। इस आरंभिक प्राकृतिक परिवेश में मनुष्य की लघुता और प्रकृति की विराटता दोनों एक साथ दिखाई देती हैं। मनु के सामने प्रकृति किसी सुंदर दृश्य की तरह नहीं, बल्कि जीवन की मूल सत्ता के रूप में उपस्थित है।

काव्य के आरंभिक दृश्य में हिमगिरि की ऊँचाई और उसके नीचे फैला जल-प्रवाह मनुष्य और प्रकृति के शक्ति-संबंध को रेखांकित करता है। "हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर" बैठा मनु प्रकृति की विराटता के सामने मनुष्य की सीमित सत्ता का प्रतीक बन जाता है। यहाँ प्रकृति मनुष्य के नियंत्रण से बाहर है। आधुनिक पर्यावरणीय विमर्श भी इसी तथ्य पर बल देता है कि मनुष्य प्रकृति का पूर्ण स्वामी नहीं है। वह प्राकृतिक तंत्र का केवल एक हिस्सा है।

'कामायनी' में प्रकृति और मनुष्य के संबंध को मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी देखा गया है। मनु की चिंता, निराशा, आशा, प्रेम और कर्म की स्थितियाँ प्राकृतिक परिवेश से जुड़ी हुई हैं। इस प्रकार बाहरी प्रकृति और आंतरिक प्रकृति के बीच निरंतर संवाद चलता रहता है। प्रसाद के यहाँ प्राकृतिक दृश्य मनुष्य के भीतर चल रहे भावात्मक परिवर्तनों को व्यक्त करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि प्रकृति उनके लिए बाह्य संसार और मानव-मन के बीच एक सेतु का कार्य करती है।

3. प्रलय : प्राकृतिक आपदा या सभ्यता-संकट का प्रतीक? 'कामायनी' का सबसे महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय प्रसंग प्रलय है। पौराणिक कथा के आधार पर निर्मित प्रलय को यदि केवल धार्मिक या मिथकीय घटना मानकर देखा जाए तो उसका अर्थ सीमित हो जाता है। किंतु पर्यावरणीय पुनर्पाठ में प्रलय सभ्यता और प्रकृति के असंतुलित संबंध के परिणाम के रूप में भी देखा जा सकता है।

प्रलय के बाद मनु का अकेला बचना यह संकेत देता है कि मनुष्य की समस्त सभ्यतागत उपलब्धियाँ प्रकृति की एक विराट शक्ति के सामने क्षणभर में समाप्त हो सकती हैं। मनुष्य ने ज्ञान, विज्ञान, तकनीक और संगठन के माध्यम से प्रकृति पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया है, किंतु प्रकृति की अपनी स्वतंत्र सत्ता है। जब मनुष्य इस सत्ता की उपेक्षा करता है तो उसका विकास विनाश का कारण बन सकता है।

'कामायनी' में देव-संस्कृति का विलासपूर्ण जीवन इसी संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है। वहाँ सुख, भोग और ऐश्वर्य का अत्यधिक विस्तार दिखाई देता है। मनुष्य जब आवश्यकता और संयम की सीमाओं को छोड़कर उपभोग की ओर बढ़ता है, तब प्रकृति उसके लिए संसाधन मात्र बन जाती है। यही दृष्टि आधुनिक पर्यावरणीय संकट की जड़ में भी दिखाई देती है। प्राकृतिक संसाधनों को असीम मानकर उनका निरंतर दोहन करने की प्रवृत्ति अंततः प्रकृति और मनुष्य दोनों के लिए संकट उत्पन्न करती है।

प्रसाद का संकेत स्पष्ट है कि सभ्यता की शक्ति तभी सार्थक है जब वह प्रकृति के साथ संतुलित संबंध स्थापित करे। 'कामायनी' में प्रकृति की दुर्जेयता मनुष्य के अहंकार को चुनौती देती है। "प्रकृति रही दुर्जेय" जैसी अभिव्यक्ति मनुष्य को यह स्मरण कराती है कि प्राकृतिक सत्ता को पूर्णतः पराजित करने का दावा अंततः भ्रम है।

4. देव-संस्कृति और प्रकृति-दोहन- 'कामायनी' के पर्यावरणीय पुनर्पाठ में देव-संस्कृति का प्रसंग विशेष महत्त्व रखता है। देव-संस्कृति के पतन के पीछे केवल नैतिक अथवा दार्शनिक कारण नहीं हैं; उसके भीतर उपभोग और विलासिता की ऐसी प्रवृत्ति भी दिखाई देती है जो आधुनिक उपभोक्तावादी सभ्यता से तुलना की संभावना उत्पन्न करती है।

जब सभ्यता का उद्देश्य जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति से आगे बढ़कर निरंतर भोग-विस्तार बन जाता है, तब प्रकृति पर दबाव बढ़ता जाता है। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग आवश्यकता की पूर्ति के लिए किया जाए तो वह जीवन-व्यवस्था का हिस्सा है, किंतु उनका

असीमित दोहन पर्यावरणीय संकट को जन्म देता है। प्रसाद की दृष्टि में भी सभ्यता का ऐसा विकास अंततः आत्मविनाशकारी हो सकता है।

इसी संदर्भ में 'कामायनी' की वह प्रसिद्ध पंक्ति विशेष महत्त्व रखती है जिसमें प्राकृतिक शक्ति को यंत्रों द्वारा नियंत्रित करने और जीवन-शक्ति के शोषण की ओर संकेत मिलता है—"प्रकृत शक्ति तुमने यंत्रों से सबकी छीनी।" यह छोटा-सा कथन आधुनिक तकनीकी सभ्यता के संदर्भ में अत्यंत अर्थपूर्ण हो जाता है। यहाँ यंत्र स्वयं समस्या नहीं है; समस्या तब उत्पन्न होती है जब तकनीक प्रकृति के संतुलन को नष्ट करने और उसके संसाधनों के असीमित दोहन का माध्यम बन जाती है।

इस प्रकार प्रसाद विज्ञान और तकनीक के विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे ऐसी सभ्यता के विरोधी दिखाई देते हैं जिसमें बुद्धि और तकनीकी शक्ति नैतिक एवं मानवीय नियंत्रण से मुक्त हो जाती है। यह विचार आज के पर्यावरणीय विमर्श में अत्यंत प्रासंगिक है।

5. श्रद्धा और प्रकृति के साथ पुनर्संबंध- प्रलय के बाद मनु की जीवन-यात्रा में श्रद्धा का प्रवेश अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। श्रद्धा केवल एक स्त्री-पात्र नहीं, बल्कि जीवन के भावात्मक, मानवीय और संवेदनात्मक पक्ष की प्रतीक है। पर्यावरणीय दृष्टि से श्रद्धा को प्रकृति के साथ मनुष्य के संवेदनात्मक संबंध के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है।

मनु के भीतर प्रलय के बाद जो रिक्तता उत्पन्न होती है, श्रद्धा उसके जीवन में पुनः विश्वास और सृजन की संभावना लेकर आती है। यह पुनर्सृजन प्रकृति से अलग होकर नहीं, बल्कि प्रकृति के निकट जाकर संभव होता है। श्रद्धा का संसार संयम, प्रेम, विश्वास और जीवन की स्वाभाविक गति से जुड़ा हुआ है।

यहाँ प्रकृति केवल बाहरी दृश्य नहीं रहती, बल्कि जीवन की सहचरी बन जाती है। मनुष्य जब प्रकृति के प्रति संवेदनशील होता है, तभी उसके भीतर जीवन के प्रति भी संवेदना विकसित होती है। इस दृष्टि से श्रद्धा का चरित्र आधुनिक पारिस्थितिकी में वर्णित संवेदनशील सह-अस्तित्व की धारणा से जोड़ा जा सकता है।

6. इड़ा और बुद्धि-प्रधान सभ्यता- 'कामायनी' में श्रद्धा के समान इड़ा भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रतीक है। इड़ा बुद्धि, तर्क, व्यवस्था, ज्ञान और सामाजिक संगठन का प्रतिनिधित्व करती है। आधुनिक सभ्यता के निर्माण में बुद्धि और विज्ञान की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। किंतु समस्या तब उत्पन्न होती है जब बुद्धि जीवन के भावात्मक और नैतिक पक्ष से कट जाती है।

पर्यावरणीय संकट का एक कारण यही असंतुलन है। विज्ञान और तकनीक ने मनुष्य को प्रकृति की शक्तियों को समझने तथा नियंत्रित करने की असाधारण क्षमता दी है, किंतु यदि इस क्षमता का उपयोग केवल आर्थिक लाभ और उपभोग बढ़ाने के लिए किया जाए तो वह प्रकृति के लिए विनाशकारी हो सकता है।

'कामायनी' में श्रद्धा और इड़ा का संबंध इसी व्यापक संतुलन की आवश्यकता की ओर संकेत करता है। न तो केवल भावना पर्याप्त है और न केवल बुद्धि। मनुष्य को ऐसी समन्वित चेतना चाहिए जिसमें ज्ञान के साथ संवेदना, विज्ञान के साथ नैतिकता और विकास के साथ प्रकृति-सम्मान जुड़ा हो।

इस दृष्टि से 'कामायनी' आधुनिक पर्यावरणीय चिंतन को एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक आधार प्रदान करती है। पर्यावरण-संकट का समाधान केवल वैज्ञानिक तकनीक से नहीं होगा; उसके लिए मनुष्य की जीवन-दृष्टि और उपभोग की प्रवृत्ति में भी परिवर्तन आवश्यक है।

7. प्रकृति का विनाशकारी और पुनर्सृजनकारी रूप-'कामायनी' में प्रकृति के दो प्रमुख रूप दिखाई देते हैं—विनाशकारी और पुनर्सृजनकारी। प्रलय प्रकृति की विनाशकारी शक्ति को सामने लाता है, जबकि प्रलय के बाद जीवन का पुनर्गठन प्रकृति की सृजनात्मक शक्ति को अभिव्यक्त करता है।

यह द्वंद्व आधुनिक पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। प्रकृति को केवल कोमल, सुंदर और मनुष्य के उपयोग के लिए उपलब्ध सत्ता मानना उसकी वास्तविकता को सीमित करना है। प्रकृति में ऐसी शक्तियाँ भी हैं जो मनुष्य की सभ्यता को चुनौती दे सकती हैं। बाढ़, भूकंप, तूफान और अन्य प्राकृतिक घटनाएँ मनुष्य को उसकी सीमाओं का बोध कराती हैं।

लेकिन प्रकृति केवल विनाश नहीं करती। विनाश के बाद पुनर्सृजन भी उसी प्राकृतिक प्रक्रिया का हिस्सा है। 'कामायनी' में प्रलय के बाद जीवन का क्रमशः पुनः स्थापित होना इस तथ्य का प्रतीक है कि प्रकृति में पुनर्जीवन की क्षमता भी मौजूद है।

इस प्रकार प्रकृति के प्रति मनुष्य का दृष्टिकोण भय और शोषण पर आधारित न होकर सम्मान, संवेदना और संतुलन पर आधारित होना चाहिए।

8. मनुष्य और प्रकृति : स्वामित्व नहीं, सह-अस्तित्व- आधुनिक पर्यावरणीय संकट का मूल प्रश्न यह है कि मनुष्य स्वयं को प्रकृति से अलग मानता है या प्रकृति का हिस्सा। यदि मनुष्य स्वयं को प्रकृति का स्वामी मानता है तो वह प्राकृतिक संसाधनों को अपनी इच्छानुसार उपयोग करने का अधिकार समझता है। इसके विपरीत यदि वह स्वयं को प्रकृति के व्यापक तंत्र का हिस्सा मानता है तो उसके व्यवहार में जिम्मेदारी और संयम उत्पन्न होता है।

'कामायनी' का मूल जीवन-दर्शन इसी दूसरे दृष्टिकोण के निकट दिखाई देता है। मनुष्य प्रकृति से अलग नहीं है। उसका अस्तित्व जल, वायु, भूमि, वनस्पति और अन्य जीव-जगत से जुड़ा हुआ है। प्रलय इस परस्पर संबंध की उपेक्षा के परिणाम का प्रतीक बन जाता है।

इस संदर्भ में 'कामायनी' को आधुनिक पारिस्थितिक चिंतन के साथ पढ़ना इसलिए उपयोगी है क्योंकि यह हमें बताती है कि सभ्यता का वास्तविक विकास केवल भौतिक उपलब्धियों में नहीं है। यदि विकास प्रकृति के विनाश पर आधारित है तो वह अंततः मानव-विरोधी भी सिद्ध हो सकता है।

9. उपभोग और आधुनिक पर्यावरणीय संकट- आज की दुनिया में उपभोक्तावाद पर्यावरणीय संकट का एक प्रमुख कारण है। अधिक उत्पादन के लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है और अधिक उपभोग के लिए प्रकृति से लगातार संसाधन प्राप्त किए जाते हैं। परिणामस्वरूप वन घटते हैं, जल-स्रोत प्रदूषित होते हैं, भूमि की उर्वरता प्रभावित होती है और जैव-विविधता का क्षरण होता है।

'कामायनी' के देव-संस्कृति प्रसंग को इस संदर्भ में पुनः पढ़ा जा सकता है। विलासिता की अति और प्रकृति से दूरी ऐसी सभ्यता का निर्माण करती है जो अपनी ही आधारभूमि को कमजोर करती जाती है। प्रसाद का संदेश आधुनिक भाषा में यह कहा जा सकता है कि विकास यदि संतुलित नहीं है तो वह विनाश का कारण बन सकता है।

यहाँ 'कामायनी' की प्रासंगिकता केवल पर्यावरण-संरक्षण के नारे तक सीमित नहीं रहती। वह मनुष्य के भीतर ऐसी जीवन-दृष्टि विकसित करने की आवश्यकता पर बल देती है जिसमें संयम और संतुलन महत्त्वपूर्ण हों। पर्यावरणीय संकट का समाधान केवल बाहर की प्रकृति को बचाने से नहीं, बल्कि मनुष्य की इच्छाओं और जीवन-मूल्यों को संतुलित करने से भी जुड़ा है।

10. प्रकृति और स्त्री-तत्त्व- 'कामायनी' में प्रकृति और स्त्री-तत्त्व के बीच भी एक सांकेतिक संबंध दिखाई देता है। श्रद्धा जीवन, सृजन, प्रेम और संवेदना की प्रतिनिधि है। प्रकृति भी सृजन और जीवन की आधारभूमि है। इसलिए श्रद्धा के माध्यम से प्रकृति के साथ एक संवेदनात्मक संबंध की संभावना निर्मित होती है।

हालाँकि प्रकृति को केवल स्त्री के साथ समान करके देखना पर्याप्त नहीं होगा, फिर भी काव्य में श्रद्धा की जीवनदायिनी भूमिका और प्रकृति की सृजनात्मक शक्ति के बीच एक प्रतीकात्मक साम्य स्थापित किया जा सकता है। दोनों ही मनुष्य के भीतर जीवन के प्रति आस्था और संवेदना को विकसित करते हैं।

इस दृष्टि से 'कामायनी' में प्रकृति-बोध को मानवीय संवेदना के व्यापक प्रश्न से जोड़ना संभव है। प्रकृति के प्रति असंवेदनशील व्यक्ति अंततः जीवन के प्रति भी असंवेदनशील हो सकता है।

11. पर्यावरणीय पुनर्पाठ की दृष्टि से 'कामायनी' की प्रासंगिकता- आज के समय में 'कामायनी' का पर्यावरणीय पुनर्पाठ इसलिए आवश्यक है क्योंकि वर्तमान मानव सभ्यता अनेक ऐसे संकटों का सामना कर रही है जिनकी जड़ में मनुष्य और प्रकृति के बीच बढ़ता असंतुलन है। जलवायु परिवर्तन, अत्यधिक तापमान, अनियमित वर्षा, बाढ़, सूखा, जल-संकट, वनों का विनाश और जैव-विविधता का क्षरण मानव जीवन को प्रभावित कर रहे हैं।

ऐसे समय में 'कामायनी' का प्रलय प्रसंग नए अर्थ ग्रहण करता है। आधुनिक प्रलय किसी एक पौराणिक घटना का रूप नहीं, बल्कि अनेक पर्यावरणीय संकटों के रूप में हमारे सामने उपस्थित हो सकता है। प्राकृतिक आपदाएँ स्वयं में केवल प्रकृति की समस्या नहीं हैं; कई बार मानवीय हस्तक्षेप उनके प्रभाव को अधिक गंभीर बना देता है।

उदाहरण के लिए नदी के प्राकृतिक मार्गों का अतिक्रमण, वनों की कटाई, अनियोजित शहरीकरण और अत्यधिक निर्माण बाढ़ के प्रभाव को बढ़ा सकते हैं। इसी प्रकार प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन पर्यावरणीय असंतुलन को बढ़ाता है। 'कामायनी' में सभ्यता और प्रकृति के संबंध को लेकर जो चेतावनी दिखाई देती है, उसे आज के संदर्भ में इसी व्यापक अर्थ में समझा जा सकता है।

12. 'कामायनी' में पर्यावरणीय नैतिकता- पर्यावरणीय चेतना केवल प्रकृति की सुंदरता का वर्णन नहीं है। उसके भीतर एक नैतिक प्रश्न भी निहित है—मनुष्य प्रकृति के साथ कैसा व्यवहार करे? 'कामायनी' इसी प्रश्न को अपने दार्शनिक ढंग से सामने लाती है।

मनुष्य के लिए प्रकृति केवल उपयोग की वस्तु नहीं हो सकती। जल, वायु, भूमि, वनस्पति और जीव-जगत का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। मनुष्य का जीवन इन सभी पर निर्भर है। इसलिए प्रकृति के प्रति जिम्मेदारी मनुष्य के नैतिक जीवन का हिस्सा होनी चाहिए।

'कामायनी' में श्रद्धा और इड़ा के बीच संतुलन की आवश्यकता को पर्यावरणीय नैतिकता से जोड़ा जा सकता है। बुद्धि मनुष्य को संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सिखा सकती है और संवेदना उसे प्रकृति के प्रति जिम्मेदार बना सकती है। दोनों का संतुलन ही ऐसी सभ्यता का निर्माण कर सकता है जिसमें विकास और पर्यावरण एक-दूसरे के विरोधी न हों।

13. निष्कर्ष

'कामायनी' का पर्यावरणीय पुनर्पाठ यह स्पष्ट करता है कि जयशंकर प्रसाद की प्रकृति-दृष्टि केवल प्राकृतिक सौंदर्य के चित्रण तक सीमित नहीं है। प्रकृति उनके यहाँ मानव-अस्तित्व की मूल आधारभूमि है। वह मनुष्य को जीवन देती है, उसके भाव-जगत को प्रभावित करती है, उसकी सभ्यता को चुनौती देती है और विनाश के बाद पुनर्सृजन की संभावना भी प्रदान करती है।

प्रलय का प्रसंग इस संदर्भ में विशेष महत्त्व रखता है। इसे केवल पौराणिक जल-प्लावन के रूप में पढ़ने के स्थान पर सभ्यता और प्रकृति के बीच असंतुलन के सांकेतिक परिणाम के रूप में देखा जा सकता है। देव-संस्कृति की विलासिता आधुनिक उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों की याद दिलाती है, जबकि प्रलय मनुष्य के अहंकार और प्रकृति की विराट शक्ति के बीच संघर्ष का प्रतीक बन जाता है।

मनु का अनुभव यह सिखाता है कि मनुष्य की सभ्यता कितनी भी विकसित क्यों न हो, वह प्रकृति से अलग होकर अस्तित्व में नहीं रह सकती। श्रद्धा के माध्यम से जीवन में संवेदना, प्रेम और पुनर्सृजन का प्रवेश तथा इड़ा के माध्यम से बुद्धि, ज्ञान और सामाजिक व्यवस्था का विकास इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि मानव जीवन में भावना और बुद्धि दोनों का संतुलन आवश्यक है। पर्यावरणीय संदर्भ में इसका अर्थ है कि वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के साथ पर्यावरणीय संवेदना और नैतिक जिम्मेदारी भी आवश्यक है।

इस प्रकार 'कामायनी' आधुनिक पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक पाठ बन जाती है। वह मनुष्य को प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के अहंकार से मुक्त होकर उसके साथ सह-अस्तित्व की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है। आज जब विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन स्थापित करना मानव सभ्यता की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है, तब 'कामायनी' का संदेश अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है। प्रकृति का सम्मान, संसाधनों का संयमित उपयोग, जीवन के प्रति संवेदना और विकास की संतुलित दृष्टि—ये सभी मूल्य 'कामायनी' के व्यापक जीवन-दर्शन में निहित दिखाई देते हैं।

अतः 'कामायनी' को केवल मनु की मनोवैज्ञानिक यात्रा अथवा श्रद्धा और इड़ा के दार्शनिक संघर्ष के रूप में पढ़ना उसके अर्थ-संसार को सीमित करना होगा। इसका एक महत्त्वपूर्ण पाठ मानव और प्रकृति के संबंध की पुनर्स्थापना में भी निहित है। इस अर्थ में 'कामायनी' आधुनिक पर्यावरणीय चेतना को एक गहरी सांस्कृतिक और दार्शनिक आधारभूमि प्रदान करती है और मनुष्य को यह स्मरण कराती है कि प्रकृति के विनाश पर निर्मित सभ्यता अंततः अपने ही अस्तित्व को संकट में डाल देती है।

संदर्भ-सूची

1. द्विवेदी, हजारीप्रसाद। (2001)। *साहित्य सहचर*। द्वितीय संस्करण। 256 पृष्ठ। नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
2. प्रसाद, जयशंकर। (2017)। *कामायनी*। संस्करण। 128 पृष्ठ। इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
3. प्रसाद, जयशंकर। (2004)। *प्रसाद के सम्पूर्ण नाटक एवं एकांकी*। प्रथम संस्करण। 584 पृष्ठ। इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
4. शर्मा, रामविलास। (2015)। *आस्था और सौंदर्य*। तृतीय आवृत्ति। 257 पृष्ठ। नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
5. सिंह, नामवर। (1986)। *इतिहास और आलोचना*। चतुर्थ संस्करण। 178 पृष्ठ। नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
6. "प्रसाद के साहित्य में पर्यावरणीय चेतना।"। *उदंती*। पृष्ठ 1–6। रायपुर : उदंती प्रकाशन।
7. "प्राकृतिक आपदा : जल प्लावन और जयशंकर प्रसाद की कामायनी।" (2015)। *ग्रंथालय*। प्रथम संस्करण। पृष्ठ 1–10। नई दिल्ली : ग्रंथालय प्रकाशन।